Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. VI, Issue No. XII, October-2013, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

हिन्दी कविता की संरचनाः एक विवेचन

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. VI, Issue No. XII, October-2013, ISSN 2230-7540

हिन्दी कविता की संरचनाः एक विवेचन

Mishra Anilkumar Bholanath

Research Scholar, Bhagwant University, Ajmer

----------X----------

परिचयः

हमारी आन्तरिक अनुभूतियों की गहन संश्लिष्ट संरचना ही काव्य का निर्माण करती है। काव्य बाहरी यथार्थ एवं संवेदनाओं से युक्त हृदय का स्पन्दन है। कविता चाहे कितनी ही काल्पनिक हो लेकिन वह अनायास ही अस्तित्व में नही आती। कविता का अस्तित्व में आना भी एक लम्बी प्रक्रिया पर निर्भर करता है। यह प्रक्रिया कविता के संघटक तत्त्वों में निहित क्रिया को आवेगमय बना कर उसकी संरचना को अभिव्यक्त करती है। कविता की संरचना यहीं से शुरू होती है जिसमें गहन उत्पीड़न के साथ–साथ सृजन–सुख भी है। कविता की परिभाषा देते हुए डॉ. जगदीश गुप्त कहते हैं "कविता सहज आन्तरिक अनुशासन से युक्त अनुभूति जन्य सघन लयात्मक शब्दार्थ है जिसमें यह अनुभूति उत्पन्न करने की यथेष्ट क्षमता निहित रहती है।"1 कविता में प्रयुक्त शब्द अपने पूर्ण सामर्थ्य के साथ अपने अर्थ को व्यक्त करता है। यही अर्थ लयात्मक बनकर कविता की रचना प्रक्रिया को रूपायित करता है। काव्य में शब्द और अर्थ के परस्पर सम्बन्धों को समझने के लिए कविता के संघटक तत्त्वों की संरचना को समझना अनिवार्य है। विगत कई वर्षो से साहित्य मर्मज्ञों ने सर्जक की मानसिकता और उसकी अभिव्यक्ति के नवीन उपकरणों और रूपों के सम्बन्ध में नई–नई अवधारणाएँ प्रस्तुत की हैं। इन समीक्षकों ने पुराने निष्कर्षो और प्रतिमानों के स्थान पर नवीन और अधिक सन्तोष जनक पद्धतियों की प्रतिष्ठा की है। इन्होंने ऐसी पद्धतियों पर जोर दिया जो अधिक से अधिक सार्वदेशिक, सार्वकालिक, वस्तुनिष्ठ और निर्वैयक्तिक हों । इस साधना की पूर्व पीठिका में बदलते सामाजिक परिप्रेक्ष्य जीवन–दर्शन, विभिन्न राजनीतिक वाद और विभिन्न सामाजिक अवधारणाएँ रही हैं। इसी गति में रूपवादी, संरचनात्मक, शैली वैज्ञानिक समीक्षा पद्धतियाँ अस्तित्व में आई है।

साहित्य की समीक्षाः

"संरचना" शब्द सम् उपसर्ग "रच" धातु ल्युट और टाप् प्रत्यय के संयोग से निर्मित हुआ है। "सम्" उपसर्ग "सम" संगत और प्रकृष्ट अर्थ का वाचक होता है। संश्लिष्ट भाव–विधान जो रचा गया हो वह रचना अर्थात् कृति होती है। इसी प्रकार सम्यक रूप से रची गई कृति ही संरचना कहलाई। संरचना का अंग्रेजी पर्याय है "स्ट्रक्चर" अर्थात् वह तरीका जिससे वस्तु निर्मित की जाती है। नालन्दा विशाल शब्द सागर में "संरचना" के लगभग नौ अर्थ बताए गए हैं। मूलरूप से संरचना कृति के निर्माण को नहीं बल्कि कृति के ऐक्य की अन्विति को कहते हैं।

(अ) संरचना का आशयः

संरचना वह प्रक्रिया है जो एकाधिक तत्त्वों या उपकरणों के बीच उन सम्बन्ध–सूत्रों की सृष्टि करती है, जिसके कारण व्यक्तिगत ऐक्य जन्म लेता है। वह प्रक्रिया एक से अधिक तत्त्वों या उपकरणों के होने पर ही सक्रिय होती है। जब कोई रचनाकार किसी संरचना का निर्माण करता है तब उसकी संरचना का सम्बंध न तो तत्त्व–सृजन से है और न तत्त्वों के अन्तर्बाह्य प्राकृतिक सम्बन्ध–सूत्रों की खोज और उनके परिज्ञान से ही है। यहाँ यह ध्यातत्त्व है कि कोई भी कृति अपना स्वतन्त्र ऐक्य स्थापित करती है । जिसे हम "डवलपिंग यूनिटी ऑफ ए वर्क" कहते है। अतः विभिन्न तत्त्वों की विकासशील एकता ही संरचना कहलाती है।

डॉ. कृष्ण कुमार शर्मा के अनुसार "संरचना वस्तुतः सावयवी हाती है अर्थात् प्रत्येक संरचना में कुछ संघटक अनिवार्यतः होते हैं, फिर यह भी आवश्यक है कि संरचना अभिधान की सिद्धि के लिए उप संघटकों में परस्पर संगति भी हो, असंगत रूप में एकत्र संघटक संरचना का निर्माण नहीं करते। उन संघटकों में अन्वय सम्बन्ध होना आवश्यक है तभी उनमें पारस्परिक संगति की निष्पत्ति हो सकेगी। मैं इस सम्बन्ध में यह निवेदन करने के पक्ष में हूँ कि प्रकार्यों की प्रकृति अमूर्त होते हुए भी जब वे भाषिक प्रतीक के रूप में सिद्ध दिखलाई पड़ते है तो संरचना का बाह्य रूप प्रतिफलित होता है, इस बाह्य रूप के आधार पर ही उस प्रेरक आवेग की पहचान होती है, जिसने संघटकों को विशेष व्यवस्था में निबद्ध किया और जो उनकी संगति का भी व्यवस्थापक है। इस दृष्टि से संघटकों से संगतिजन्य सांकल्य को ही संरचना कहा गया है।"1 डॉ. शर्मा का जोर संगतिजन्य सांकल्य पर है जिससे संघटक तत्त्वों का आवेग जन्य ऐक्य स्थापित होता है।

कविता और वस्तुः

कवि अपने अन्तर में व्याप्त जीवन–जगत् को प्रकट करता है किन्तु उसकी अनुभूतियाँ मात्र व्यक्तिगत नहीं होती। कवि की अनुभूतियाँ समाज के भीतर पाई जाने वाली मानव–स्थितियों एवं सामाजिक सम्बन्धों का संवेदनात्मक संयोजन है। संवेदनाओं का यह संयोजन कहीं कवि की प्रकृति और बाह्य परिवेश के इन्ही घात–प्रतिघातों के फलस्वरूप कवि को काव्य–रचना की प्रेरणा और कविता के लिए "वस्तु" प्राप्त होती है।

कविता की वस्तु–सरंचना कवि की संवेदनाओं का ही परिणाम है कि कवि इन संवेदनाओं को अपने अन्तर्बाह्य परिवेश के द्वन्द्व के परिणाम के रूप में प्राप्त करता है। दूसरे शब्दों में –"काव्य का

www.ignited.in

वस्तु–तत्त्व वह मनस्तत्त्व अन्तर्तत्त्व–व्यवस्था का ही एक भाग है। यह अन्तर्तत्त्व–व्यवस्था आत्मसातकृत जीवन–जगत् ही है। आत्मसातकृत जीवनजगत् अर्थात् संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदन के मूर्त तत्त्व जीवन–जगत् के ही होते है। यह जीवन जगत् समाज और वर्ग और परिवार के भीतर पायी जाने वाली मानव–स्थिति और मानव–सम्बन्धों और मानव प्रयत्नों द्वारा अर्जित परम्परागत ज्ञान से बना हुआ होता है। मन के तत्त्व जीवन–जगत् के दिये हुए तत्त्व हैं।

काव्य–रचना के समय कवि विषय के साथ एकीकरण करता है यानि कि वह स्वयं को बाह्य प्रकृति, घटनाओं के साथ तादात्म्य कर काव्य सृष्टि करता है। अंग्रेजी कवि कीट्स ने भी यही अनुभव किया है कि "कवि की अपनी कोई विशिष्ट सत्ता नहीं . . . . वह दूसरों की सत्ता के साथ सूर्य, चन्द्र, समुंद्र, नर–नारियों के साथ मिलकर एकाकार होता है।. . . . .यदि कोई चिड़िया मेरी खिड़की के पास आती है तो मैं इसके व्यापारों का भागी बन जाता हूं और भूमि पर से दाने चुगने लगता हूँ।"

कविता और भाषा–संरचनाः

कविता जीवन तत्त्वों का कलापूर्ण संयोजन है। कविता में अंकित वास्तविक जीवन नहीं होता, बल्कि पूनर्रचित जीवन होता है। इसमें कवि जीवन को अपने ढंग से नये रूप में गढ़ता है। इस कविताई जीवन में अनुभूतियों का विन्यास भाषा के एक विशेष रूप में व्यक्त होता है। कवि का अपना निजी स्वतः सम्पूर्ण काव्य जगत् है। स्वतः सम्पूर्ण इस अर्थ में कि कवि इस संसार के भीतर, एक दूसरे ही संसार का निर्माण करता है पुनः सृजन होने की वजह से यह संसार अनोखा है। अनोखा इसलिये नहीं कि इस संसार की कोई वास्तविकता जीवन की कोई सच्चाई उसमें नहीं है, बल्कि इस अर्थ में कि वह इस संसार की सच्चाई होते हुए भी, उसमें कुछ कारणों से खासकर कवि के रचनात्मक सम्पर्क के कारण उसमें कुछ भिन्नतर है। आचार्य आनन्दवर्द्धन के लिये यह "काव्य संसार अपार" है, कवि ही उसका एकमात्र "प्रजापति" है, यह विश्व, उसे जैसा रचना है, वह उसका निर्माण करता है या परिवर्तित करता है यथा–

"अपारे काव्य–संसारे, कविरेक : प्रजापतिः

यथास्मै रोचते विश्वं, तथेदं परिवर्तते।। "1

संक्षेप में, कविता का वास्तविक क्षेत्र, स्वंय कविता की अपनी सीमा है, जो स्वंय में ठोस और वास्तविक है। कविता का संगठन, काव्य भाषा का ही संगठन है। काव्य की आन्तरिक संरचना उसकी मूल संरचना है, जो तार्किक होती है। कविता के सारे भागों में आन्तरिक संगति, व्यवस्था, आकर्षण और सौन्दर्य होता है। कविता का सौन्दर्य उसके तत्त्वों के सम्पूर्ण पारस्परिक सम्बन्धों में स्थित होता है।

समकालीन कविता अपने काव्यभाषिक रूप से ही अनुभवगम्य हो रही है क्योंकि "आज जब कविता के सभी परम्परागत भेदक लक्षण, तुक, छन्द, अलंकरण लय (शायद सब में महत्त्वपूर्ण रस भी) धीरे–धीरे विलुप्त हो चले हैं तो काव्यभाषा ही वह अन्तिम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार शेष रह जाता है, जिसके सहारे कविता को समझने की चेष्टा हो सकती है।"2

संरचना वस्तुतः सावयवी होती है अर्थात् प्रत्येक संरचना में कुछ संघटक अनिवार्यतः होते हैं। संरचना के लिए यह भी आवश्यक है कि "रचना" अभिधान की सिद्धि के लिये उन संघटकों में परस्पर संगति भी हो। असंगठित रूप में एकत्र संघटक संरचना का निर्माण नहीं करते, उन संघटकों में अन्वय सम्बन्ध होना आवश्यक है तभी उनमें पारस्परिक संगति उत्पन्न होगी।

कवि की अनुभूतियों की गहन संश्लिष्ट संरचना ही काव्य का निर्माण करती है। काव्य की विषय–वस्तु और भाषा (शिल्प) का विभाजन काव्य के वास्तविक रूप के सम्बंध में भ्रान्ति उत्पन्न करता हैं । जिस प्रकार कुम्हार के मिट्टी से बर्तन बनाने पर मिट्टी ओर बर्तन बनाने का कौशल अलग–अलग नहीं रहते, उसी प्रकार काव्य–कृति में संवेदना और शिल्प एक ही संरचना के अवश्य होते हैं, अन्योन्याश्रयी होते हैं।

(क) संरचना एवं संरचनावादः

संरचना वह प्रक्रिया है जो एकाधिक तत्त्वों के बीच उन सम्बन्ध सूत्रों की सृष्टि करती है, जिसके कारण व्यक्तिगत ऐक्य का जन्म होता है। संरचना पूर्ण होती है। किसी कृति के घटकों का योग संरचना नहीं है। प्रत्येक घटक पूर्ण अंग के रूप में एक आन्तरिक नियम से परिचालित होकर संरचना का संश्लिष्ट अंश बनता है। घटक अंग है तो संरचना अंगी, दोनों का अंग–अंगी सम्बन्ध होता है, अतः संरचना एक पूर्ण प्रक्रिया का नाम है। प्रत्येक संरचना अपने आप में पूर्ण होती है। संरचना अपनी प्रकृति में अमूर्त और संकल्पनात्मक होती है। संरचना के अवयवों के सम्बन्धों की व्यवस्था निश्चित और अमूर्त होती है। संरचना के अवयवों के सम्बन्धों की व्यवस्था निश्चित और अमूर्त होती है। संरचना के अंग परस्पर सम्बन्धित होते हुए अपनी एक अखण्ड सत्ता का निर्माण करते हैं।

ग्रन्थ सूचीः

1. अँधेरे के बावजूद –बलदेव वंशी – वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 1988
2. अगली शताब्दी के बारे में –परमानन्द श्रीवास्तव –प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, प्रथम सं. 1981
3. आठवें दशक की शाम–सुरेन्द्र तिवारी – राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 1877
4. बची हुई पृथ्वी – लीलाधर जगूड़ी – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 1977
5. उनींदे की लोरी – गिरधर राठी – राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली प्रथम सं. 1985
6. एक अकेला सूरज खेले – हरीश भादानी – धरती प्रकाशन, दिल्ली प्रथम सं. 1988
7. अकाल में सारस – केदारनाथ सिंह – राजकमल प्रकाशन दिल्ली, प्रथम सं. 1978
8. एक पुरूष और – विनय – भारत भाषा प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 1985
9. कल सुनना मुझे – धूमिल – विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम सं. 1977
10. कुछ पतेः कुछ चिट्ठियाँ – रघुवीर सहाय – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

11. खूँटियों पर टंगे लोग – सर्वेश्वर दयाल सक्सेना – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 1984

12. घर का रास्ता – मंगलेश डबराल – राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 1988

13. चीजें उपस्थित हैं – नीलाभ – राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 1988

14. जमीन पक रही है – केदारनाथ सिंह – प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, प्रथम सं. 1980

15. दीवारों पर खून – चन्द्रकान्त देवताले – राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली प्रथम सं. 1974

16. नदी भागती आई – रमेशचन्द्र शाह – नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्र.सं. 1977

17. यह समय मामूली नहीं – नन्द चतुर्वेदी – पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रथम सं.

18. लालटेन और कवि जमाल हुसैन – प्रणव कुमार वंद्योपाध्याय – नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम सं. 1988

19. संसद से सड़क तक – धूमिल – राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, छठा सं. 1990

20. सुदामा पाण्डेय का प्रजातन्त्र – धूमिल – वाणी प्रकाशन, दिल्ली प्रथम सं. 1984

21. सामना होने पर – नरेन्द्र मोहन – प्रवीण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 1979

22. हँसो हँसो जल्दी हँसो – रघुवीर सहाय – नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम सं0 1987

23. लिखित कागद कोरे – अज्ञेय – ग्रन्थायन, अलीगढ़

24. हरी धास पर क्षण भर – अज्ञेय – ग्रन्थायन, अलीगढ़

25. यहाँ से देखो – केदारनाथ सिंह, प्रकाशन संस्थान, दिल्ली प्रथम सं. 1980 पृ. 96

26. एक छोटी सी लड़ाई – कुमार विकल, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली

27. मिट्टी का चेहरा – राजेश जोशी , राजकमल प्रकाशन प्रथम सं. 1976